SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

समान नागरिक संहिताः एक विवेचनात्मक विश्लेषण

विकास राय, पी–एचडी., प्राचार्य
झारखण्ड विधि महाविद्यालय, झुमरी तलैया, कोडरमा, झारखण्ड, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Author
विकास राय, पी.–एचडी.
E-mail : dr.vikasraijvmkoderma@gmail.com

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 12/07/2025
Revised on : 11/09/2025
Accepted on : 20/09/2025
Overall Similarity : 01% on 12/09/2025

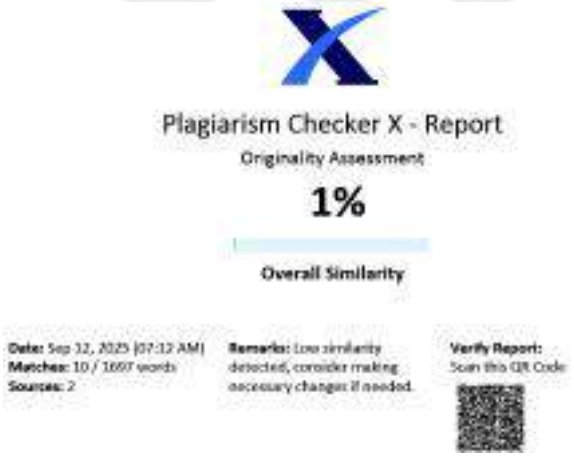

शोध सार

भारत जैसे बहुलवादी, बहु–धार्मिक और बहु–सांस्कृतिक लोकतंत्र में समान नागरिक संहिता (यूनिफॉर्म सिविल कोड) का विचार सबसे अधिक विवादास्पद और गहन बहस का विषय रहा है। यह अनुच्छेद समान नागरिक संहिता के ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, संवैधानिक प्रावधानों, इसके पक्ष और विपक्ष में तर्कों, और इसके क्रियान्वयन की चुनौतियों का एक समग्र विश्लेषण प्रस्तुत करता है। इसके साथ ही, यह लेख विभिन्न धर्मों में प्रचलित व्यक्तिगत कानूनों की वर्तमान स्थिति और उनमें निहित असमानताओं पर भी प्रकाश डालता है। लेख इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि यद्यपि एक समान कानून राष्ट्रीय एकता और लैंगिक न्याय की दिशा में एक सराहनीय लक्ष्य है, परन्तु इसकी सफलता सामुदायिक संवाद, सहमति और सांस्कृतिक संवेदनशीलता पर निर्भर करती है, न कि इसे केवल एक राजनीतिक एजेंडे के रूप में थोपे जाने पर।

मुख्य शब्द

समान नागरिक संहिता, भारतीय संविधान, व्यक्तिगत कानून, अनुच्छेद 44, लैंगिक न्याय, धर्मनिरपेक्षता.

परिचय

समान नागरिक संहिता (यूनिफॉर्म सिविल कोड – UCC) से तात्पर्य एक ऐसी एकीकृत संहिता से है जो देश के सभी नागरिकों के लिए, उनके धर्म, जाति, लिंग या लैंगिक पहचान के भेद के बिना, विवाह, तलाक, उत्तराधिकार, गोद लेने और संपत्ति के अधिकार जैसे व्यक्तिगत मामलों को नियंत्रित करने वाले कानूनों के एक समूह को प्रस्तुत करे। भारत का संविधान, राज्य के नीति निदेशक तत्वों के अंतर्गत अनुच्छेद 44 में कहता है कि राज्य, भारत के सम्पूर्ण क्षेत्र में नागरिकों के लिए एक समान नागरिक संहिता को लागू करने का प्रयास करेगा।[1]

यह प्रावधान संविधान निर्माताओं की दूरदर्शिता को दर्शाता है, जो एक आधुनिक, धर्मनिरपेक्ष और एकीकृत राष्ट्र का निर्माण करना चाहते थे। हालाँकि, संविधान लागू होने के सात दशक बाद भी, यह एक अधूरा सपना बना हुआ है। इसके कारण गहरे सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक हैं। एक ओर जहाँ इसके समर्थक इसे राष्ट्रीय एकता और सामाजिक न्याय, विशेष रूप से महिलाओं के अधिकारों की प्राप्ति के लिए आवश्यक मानते हैं, वहीं दूसरी ओर विरोधी इसे सांस्कृतिक विविधता पर हमला और धार्मिक स्वतंत्रता के अधिकार का उल्लंघन बताते हैं।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और संवैधानिक संदर्भ

भारत में व्यक्तिगत कानूनों की अवधारणा ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन की देन है। ब्रिटिश सरकार ने, अपने शासन को सुविधाजनक बनाने के लिए, एक ''नॉन–इंटरफेरेंस'' (गैर–हस्तक्षेप) की नीति अपनाई। उन्होंने फौजदारी कानून, संविदा कानून, साक्ष्य अधिनियम आदि में एकरूपता लाने के लिए समान संहिताएँ (जैसे भारतीय दंड संहिता) बनाईं, लेकिन हिंदुओं और मुसलमानों के व्यक्तिगत मामलों (विवाह, उत्तराधिकार, आदि) को उनके respective धार्मिक ग्रंथों और रीति–रिवाजों के अनुसार चलने दिया।[2] इसने एक ऐसी विरासत को जन्म दिया जहाँ धर्म और कानून गहराई से जुड़ गए।

संविधान सभा में अनुच्छेद 44 (तब मसौदा अनुच्छेद 35) पर जोरदार बहस हुई। डॉ. बी. आर. अम्बेडकर जैसे नेता न्ब्ब् के प्रबल पक्षधर थे। उनका मानना था कि एक लोकतांत्रिक राष्ट्र के लिए यह आवश्यक है कि वह सभी नागरिकों के साथ एक समान व्यवहार करे और स्त्रियों को व्यक्तिगत कानूनों की जंजीरों से मुक्त करे। हालाँकि, मुस्लिम और ईसाई अल्पसंख्यकों के कुछ सदस्यों ने इसे उनकी धार्मिक पहचान और सांस्कृतिक स्वायत्तता के लिए खतरा बताया। इस विरोध के कारण, संविधान निर्माताओं ने इसे नीति निदेशक तत्वों में शामिल किया, जो न्यायालयों द्वारा प्रवर्तनीय नहीं हैं, बल्कि राज्य के लिए एक मार्गदर्शक सिद्धांत हैं।

वर्तमान व्यक्तिगत कानूनः एक तुलनात्मक दृष्टिकोण

- भारत में विभिन्न समुदायों के व्यक्तिगत कानूनों में महत्वपूर्ण अंतर और अक्सर स्पष्ट असमानताएँ हैं, विशेष रूप से महिलाओं के अधिकारों के संदर्भ में।
- **हिंदू कानूनः** हिंदू कोड बिल (१९५५–५६) के माध्यम से महत्वपूर्ण सुधार किए गए, जिसने बहुविवाह पर रोक लगाई, तलाक के अधिकार का प्रावधान किया और पुत्रियों को संपत्ति में उत्तराधिकार का अधिकार दिया (हालाँकि २००५ के संशोधन तक पुत्री जन्मजात संयुक्त उत्तराधिकारिनी नहीं बन पाती थी)।[3] फिर भी, कुछ प्रथाएँ और व्याख्याएँ चुनौतीपूर्ण बनी हुई हैं।
- **मुस्लिम कानूनः** मुस्लिम पर्सनल लॉ (शरीयत) एप्लिकेशन एक्ट, १९३७ के तहत संचालित होता है। इसमें बहुविवाह की अनुमति, श्तलाकश् की पद्धति (जहाँ पुरुष एकतरफा तलाक दे सकता है, हालाँकि सर्वोच्च न्यायालय ने इसे निरस्त कर दिया है) और उत्तराधिकार में पुरुषों को महिलाओं की तुलना में दोगुना हिस्सा मिलना शामिल है।[4] हाल के वर्षों में, शाह बानो मामले (१९८५) और तलाक–ए–बिद्दत (तिहरी तलाक) पर फैसले (२०१७) ने इस बहस को और तेज कर दिया है।[5]
- **ईसाई और पारसी कानूनः** इन समुदायों के अपने विशिष्ट कानून हैं, जैसे भारतीय ईसाई विवाह अधिनियम, १८७२ और पारसी विवाह और तलाक अधिनियम, १९३६। इनमें भी सुधार की माँग उठती रही है, जैसे ईसाइयों में तलाक के Grounds को लेकर।

यह असमानता ही UCC की माँग का प्रमुख आधार है।

समान नागरिक संहिता के पक्ष में तर्क

1. **राष्ट्रीय एकता को बढ़ावाः** UCC का मुख्य उद्देश्य एक समान कानून के माध्यम से देश की एकता और अखंडता को मजबूत करना है। यह विभिन्न धर्मों के नागरिकों के बीच एक कानूनी बंधन स्थापित करेगा और विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग–विशिष्ट कानूनों को समाप्त करेगा।
2. **लैंगिक समानता और सामाजिक न्यायः** अधिकांश व्यक्तिगत कानून पितृसत्तात्मक हैं और महिलाओं के

साथ भेदभाव करते हैं। UCC विवाह, तलाक, उत्तराधिकार और संपत्ति के मामलों में सभी नागरिकों, विशेष रूप से महिलाओं, को समान अधिकार और स्थिति प्रदान करके लैंगिक न्याय सुनिश्चित कर सकता है।

3. **धर्मनिरपेक्षता का सही स्वरूप:** एक वास्तविक धर्मनिरपेक्ष राज्य का कर्तव्य है कि वह धर्म से राज्य को अलग करे। UCC का क्रियान्वयन इसी सिद्धांत की पुष्टि करेगा, जहाँ कानून धर्म द्वारा नहीं, बल्कि न्याय, समानता और तर्क पर आधारित होगा।
4. **कानूनी सरलीकरण:** विभिन्न व्यक्तिगत कानूनों का जटिल ताना–बाना न्यायिक प्रणाली पर भारी दबाव डालता है। एक एकीकृत कोड कानूनी प्रक्रिया को सरल बनाएगा, मुकदमेबाजी कम करेगा और न्याय की डिलीवरी को तेज करेगा।
5. **आधुनिकीकरण और सामाजिक सुधार:** UCC एक प्रगतिशील, आधुनिक समाज के अनुरूप सामाजिक मानदंडों को अपनाने में मदद कर सकता है, जो समय के साथ बदलते हैं, न कि सदियों पुराने डोगमा पर अटके रहते हैं।

समान नागरिक संहिता के विपक्ष में तर्क

1. **सांस्कृतिक विविधता और अल्पसंख्यक अधिकारों का खतरा:** भारत की सबसे बड़ी ताकत उसकी विविधता है। विरोधियों का तर्क है कि UCC इस विविधता को नष्ट कर देगा और बहुसंख्यकवादी संस्कृति को थोपेगा। अल्पसंख्यक, विशेष रूप से मुस्लिम समुदाय, इसे अपनी धार्मिक पहचान और संवैधानिक रूप से प्रदत्त अधिकार (अनुच्छेद २५–२८) पर हमला मानते हैं।[6]
2. **राजनीतिक एजेंडा:** आलोचकों का मानना है कि UCC को अक्सर वोट बैंक की राजनीति के लिए इस्तेमाल किया जाता है, न कि वास्तव में सामाजिक सुधार के लिए। यह समाज को ध्रुवीकृत करने और सांप्रदायिक तनाव पैदा करने का एक उपकरण बन गया है।
3. **एकरूपता थोपने की चुनौती:** भारत में सैकड़ों जनजातीय और स्वदेशी समुदाय हैं, जिनकी अपनी अनूठी प्रथाएँ और कानूनी परंपराएँ हैं। एक 'वन साइज फिट्स ऑल' कोड इन सभी सूक्ष्मताओं को संभालने में विफल हो सकता है और इन समुदायों के अधिकारों का हनन कर सकता है।
4. **सहमति की कमी:** UCC के सफल क्रियान्वयन के लिए सभी हितधारकों, विशेष रूप से अल्पसंख्यक समुदायों, की व्यापक सहमति और स्वीकृति आवश्यक है। फिलहाल, ऐसी कोई सहमति नहीं दिखाई देती, और इसे जबरन लागू करने से सामाजिक अशांति फैल सकती है।
5. **व्यावहारिक कठिनाइयाँ:** सभी व्यक्तिगत कानूनों को एक सूत्र में पिरोना और एक ऐसा कोड तैयार करना जो सभी के लिए न्यायसंगत हो, एक अत्यंत जटिल और संवेदनशील कार्य है। इसके लिए विस्तृत अध्ययन, चर्चा और विधायी सावधानी की आवश्यकता होगी।

न्यायपालिका का दृष्टिकोण

1. भारत का सर्वोच्च न्यायालय कई मौकों पर UCC के पक्ष में बोल चुका है। प्रथम महत्वपूर्ण टिप्पणी १९८५ के शाह बानो मामले में आई, जहाँ न्यायालय ने कहा कि अनुच्छेद ४४ एक ब्राष्ट्रीय अपमानष् बनकर रह गया है। सरला मुद्गल (१९९५) और जॉन बालामोन (२००३) जैसे मामलों में भी न्यायालय ने केंद्र सरकार से UCC लागू करने के लिए कदम उठाने का आग्रह किया।[7]
2. हालाँकि, न्यायालय ने यह भी स्पष्ट किया है कि यह एक विधायी निर्णय है और न्यायपालिका का काम कानून बनाना नहीं है। उसका काम केवल मौजूदा कानूनों की व्याख्या करना है। इस प्रकार, UCC को लागू करने की जिम्मेदारी अंततः संसद और राज्य सरकारों पर है।

निष्कर्ष

समान नागरिक संहिता का विचार निस्संदेह एक आदर्शवादी और प्रगतिशील लक्ष्य है जो समानता, न्याय और

राष्ट्रीय एकता के संवैधानिक आदर्शों के अनुरूप है। हालाँकि, इसे प्राप्त करने का मार्ग कांटों भरा है। UCC को केवल एक राजनीतिक हथियार के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए। आगे बढ़ने का तरीका जबरन थोपना नहीं, बल्कि एक समावेशी और सहभागी प्रक्रिया अपनाना होना चाहिए। इसमें शामिल हो सकता है। सभी हितधारकों – धार्मिक नेताओं, कानूनविदों, महिला अधिकार कार्यकर्ताओं और सामाजिक कार्यकर्ताओं – के साथ व्यापक सार्वजनिक बहस और संवाद। मौजूदा व्यक्तिगत कानूनों के भीतर ही सुधार करना, विशेष रूप से उन प्रावधानों को हटाना जो महिलाओं के साथ भेदभाव करते हैं।

एक ऐसा मॉडल तैयार करना जो सार्वभौमिक मानवाधिकारों और लैंगिक न्याय के सिद्धांतों को तो बरकरार रखे, लेकिन सांस्कृतिक विविधता के लिए भी सम्मान का भाव रखे (जैसे गोवा का UCC मॉडल)। कानूनी शिक्षा और जागरूकता को बढ़ावा देना ताकि लोग अपने अधिकारों और कर्तव्यों को समझ सकें।

अंततः, एक सफल समान नागरिक संहिता वह नहीं होगी जो विविधता को मिटाती है, बल्कि वह होगी जो समानता के सिद्धांत पर आधारित होते हुए भी भारत के बहुलवादी ताने–बाने में समाहित हो जाए। यह एक ऐसा सामान आधार खोजने की चुनौती है जो सभी को न्याय दे सके।

संदर्भ सूची

1. भारत का संविधान, अनुच्छेद ४४।
2. फ्लैग्सेन, सी. (2005) Colonial Law and the Genesis of the Personal Law System in India, *The Journal of Legal Pluralism and Unffoicial Law,* 37(51), 23-48.
3. हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, १९५६ (२००५ में संशोधित)।
4. मुस्लिम पर्सनल लॉ (शरीयत) एप्लिकेशन एक्ट, १९३७।
5. मोहम्मद अहमद खान बनाम शाह बानो बेगम, १९८५ एआईआर ९४५ (एससी)।
6. भारत का संविधान, अनुच्छेद २५–२८ (धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार)।
7. सरला मुद्गल बनाम भारत संघ, १९९५ ३ एससीसी ६३५य जॉन बालामोन बनाम भारत संघ, २००३ ७ एससीसी ४३६।
8. अग्रवाल, के. जे. (२०१९) *समान नागरिक संहिताः एक अध्ययन,* प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली।
9. बासु, डी. डी. (२०२२) *भारत का संविधानः एक परिचय,* प्रेंटिस हॉल ऑफ इंडिया, नई दिल्ली।
10. देशपांडे, एम. (२०१७) Uniform Civil Code: A Gendered Perspective, *Economic and Political Weekly,* 42(15), 34-40.
11. एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका (२०२३) Personal Law, www.britannica.com, Accessed on 09/07/2025.
12. गोवा सिविल कोड (१८६७) भारत सरकार।
13. लॉ कमीशन ऑफ इंडिया (२०१८) Consultation Paper on Reform of Family Law, Report No- 260.
14. महाजन, गुरप्रीत (२००५) *Religion and the Constitutional Imagination: The Case of Uniform Civil Code, In India: A National Culture,* (Ed. Geeti Sen) Sage Publications, New Delhi.
15. पाराशर, अर्चना. (२०१९) *Women and Family Law Reform in India,* Sage Publications, New Delhi-
16. सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयः शाह बानो केस (१९८५), सरला मुद्गल केस (१९९५), शयारा बानो केस (तिहरी तलाक, २०१७)।
17. सिंह, समरदतिया पाल (२०१६) *भारतीय संवैधानिक कानून,* ईबीसी पब्लिशिंग, लखनऊ।

****